International Journal of Applied Research 2023; 9(7): 136-138

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(7): 136-138
www.allresearchjournal.com
Received: 13-05-2023
Accepted: 17-06-2023

नंदिता साहू
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

डॉ. आनन्द कुमार सिंह
शोध–निर्देशक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

Corresponding Author:
नंदिता साहू
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

अज्ञेय के यात्रा–साहित्य का वर्गीकरण

नंदिता साहू, डॉ. आनन्द कुमार सिंह

सारांश
हिन्दी यात्रा–साहित्य की विकास–धारा के प्रसंग में राहुल–युग के बाद की कालावधियों हिन्दी को अजय–युग कहा जा सकता है। 'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास' के लेखक बच्चन सिंह ने इसको 'उत्तर–स्वच्छन्दतावाद–युग कहा है और कोष्ठ में '1938 अद्यतन' लिखकर इस युग को एक समय–सीमा के अन्तर्गत रखा है। इतिहासकार ने प्रवृत्ति के आधार पर इस काल के नामकरण और समारम्भ सम्बन्धी प्रश्नों को उठाते हुए इसे 'प्रगति–प्रयोग' काल कहना उचित समझा है।[1] ज्ञातव्य है कि विशेषतः प्रवृत्ति और विचारधारा के इतिहास में, स्वभावतः संक्रान्ति काल की स्थिति विकसित होती है। इसलिए काल–विभाजन एक अर्थ में अध्ययन की सुविधा के निमित्त एक परम्परागत पद्धति के सदृश है। वस्तुतः राहुल–युग के बाद जो संक्रान्ति काल की स्थिति उत्पन्न हुई, उसमें स्वच्छन्दतावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के साहित्यिक प्रवृत्तिमूलक आन्दोलनों की स्थिति विकसित हुई। इसलिए प्रायः साहित्यकार उक्त सन्दर्भ में काल के नामकरण के प्रसंग में समन्वय की प्रक्रिया से भी प्रेरित होते हैं, लेकिन साहित्य की विभिन्न कालावधियों में ऐसा व्यक्तित्व का प्रादुर्भाव होता है जो अपने सोच, कृतित्व और लेखन के माध्यम से अपने काल की विकासधारा को नेतृत्व देता है। इस क्रम में यह भी उल्लेखनीय है कि ऐसे व्यक्तित्व कभी–कभी अपनी मान्यताओं को भूलते हुए भी कालावधि की विभिन्नता और विखराव के प्रति समन्वयवादी मानसिकता से प्रेरित होकर सम्बद्ध काल–धारा में उल्लेखनीय पड़ाव के समान वैचारिक स्थल सिद्ध होते हैं।[2]

कूटशब्दः अज्ञेय के यात्रा–साहित्य, विकास–धारा, अजय–युग

प्रस्तावना
सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' के व्यक्तित्व और कृतित्व में हिन्दी साहित्य की एक कालावधि की सृजनात्मकता प्रतिभासित होती है। इसलिए कि कभी–कभी साहित्य के क्षेत्र में भी ऐसे व्यक्तियों का उद्भावन होता है, जिन्हें इतिहास बनाता है और जो स्वयं भी इतिहास बनाते हैं। इस प्रसंग में अज्ञेय, आधुनिक हिन्दी साहित्य की रचनात्मकता, प्रयोगधर्मिता और विविधा की उच्छल तरंगों के साथ उसको नयी दिशा की ओर मोड़नेवाले व्यक्तित्व सिद्ध होते हैं। ये कवि, कचाकार, निवन्धकार, पत्रकार तथा सम्पादक आदि ही नहीं, क्रान्तिकारी, सैनिक और देश–विदेश की यायावरी के प्रतिमान भी हैं। एक आलोचक ने कहा है कि प्रायः सभी साहित्य–सर्जकों के कृतित्वों में एक केन्द्रीय ऊर्जा उजागर होती है। इसी मान्यता की प्रासंगिकता अज्ञेय के कृतित्व में व्यजित होती है। अज्ञेय को सर्वाधिक नदियों और पर्वतों से विशेष लगाव है।[3] इस निष्कर्ष के साक्ष्य इनकी कृतियों के कई 'शीर्षकों' से भी प्रकट होते हैं, जैसे– 'नदी में द्वीप', 'विपथगा', 'सदा नीरा' और इनकी यायावरी से सीधा सम्बन्ध रखनेवाली कृतियों के शीर्षकों, 'अरे यायावर रहेगा याद?', 'स्मृति–लेखा', 'एक बूँद सहसा उछली' और 'संस्कृति के भावनायकों की लीलास्थली', 'सागर मुद्रा', 'सुनहले शैवाल', 'हरि घास पर क्षण–भर', 'पूर्वा' आदि में भी विम्बित हैं। अज्ञेय का जन्म उत्तर–प्रदेश के बौद्ध–स्थल कुशीनगर (कत्तिया), में होने वाले पुरातत्त्व–उत्खनन के शिविर में हुआ था। यह संयोग एक स्रोत की तरह उनके यायावरी स्वभाव और समस्त कृतित्व में परिव्याप्त है। खुले आकाश के नीचे अस्थायी रूप से स्थापित कैम्प के तम्बू में जन्म लेना जीवन में 'चरैवेति' के सन्देश को पूरी तरह जीने की भावना को प्रतीकित करता है। नीचे क्रमशः यात्रा–वृत्तों में व्यजित उनकी कृतियों की अनुभूतियों, मनस्विता, भाषा–शैलीपरक रचनाधर्मिता आदि का विवेचन उनके रचना–क्रम से किया जा रहा है।
'अरे यायावर रहेगा याद?' इस कृति की भूमिका के पूर्व और उसके बाद भी, कवि–हृदय स्मृतिकार ने दो काव्यांशों को उद्धृत किया है। प्रथम में उन्होंने यायावरी के प्रसंग में सहयात्री को याद किया है और दूसरे में स्मृतिपरक अपनी गहरी संवेदनाओं को रूपायित किया है, यथा–
पार्श्व गिरि का नम्र, चीड़ों में

डगर चढ़ती उमंगों–सी।
बिछी पैरों में नदी, ज्यों दर्द की रेखा।
विहग–शिशु मौन नीड़ों में।
मैंने आँख भर देखा।
दिया मन को दिलासा : पुनः आऊँगा
भले ही बरस दिन–अनगिन युगों के बाद!
क्षितिज ने पलक–सी खोली
तमक कर दामिनी बोली
'अरे यायावर! रहेगा याद?[4]

ये उपर्युक्त स्पन्दित छन्द, यात्रा के क्षणों में जागृत मनुष्य के बाह्य और अन्तः लोकों को व्यजित करते हैं। इनमें दृश्य और द्रष्टा, अपने सम्पृक्त स्वरूप में व्यक्त हुए हैं। ध्यातव्य है कि यात्री जब अपनी यायावरी में घर से बाहर निकलता है तो उसके पग और मन, दोनों मिलजुल कर एक ऐसे स्मृतिलोक का निर्माण करते हैं, जो निश्चयपूर्वक अपूर्व होता है। इस कृतित्व में लेखक ने 'भूमिका' के अन्तर्गत यात्रा–संस्मरणों की मूल प्रकृति और उसके अभियोजन पर भी प्रकाश डालते हुए कहा है कि – ''भ्रमण या देशाटन केवल दृश्य परिवर्तन या मनोरंजन न होकर सांस्कृतिक दृष्टि के विकास में भी योग दे, यही उसकी वास्तविक सफलता होती है। अपने यात्रा–संस्मरणों में मेरा यह प्रयत्न रहा है कि उन यात्राओं के मेरी होने की बात उन्हें तत्त्कालिक अनुभव की प्रमाणिकता और टटकापन देने के लिए सामने आयेः नहीं तो वे वृत्तान्त एक समग्र दृष्टि को उभारने में ही योग दें जिससे भविष्यत् यात्री अपने–अपने अनुभव को समृद्ध बना सकें।''[5]
उपर्युक्त प्रसंग को लेखक ने गहराई से उभारते हुए लिखा है कि, ''.....और वह यात्रा जितनी बाहरी होती है उतनी ही भीतरी भी। यात्रा का विवरण जितना स्थूल भू–विस्तार से सम्बद्ध होता है उतना ही सूक्ष्म मानसिक भूगोल से भी। 'टूरिस्ट गाइड' के सहारे अनेक व्यक्ति एक ही यात्रा कर सकते हैं, यात्रा–संस्मरण के सहारे की गयी प्रत्येक पाठकीय यात्रा भी उतनी ही विशिष्ट होती है जितनी लेखक की यात्रा रही है।''[6] निर्मल वर्मा ने भी लिखा हैः ''अज्ञेय की अधिकांश रचनाओं को पढ़ते हुए हमें बराबर उनकी अदृश्य 'उपस्थिति' का अहसास बना रहता है। यह कभी–कभी हमारे स्वायत्त अनुभव में गहरी बाधा भी वन जाता है। उनकी कहानी या कविता पढ़ते हुए हम सिर्फ खिड़की के बाहर फैला परिदृश्य ही नहीं देखते, बल्कि उस 'आँख' को भी देखते हैं जो उस परिदृश्य को एक रचनात्मक अनुभव में परिणत कर रही हैं।''[7] 'अरे यायावर रहेगा याद?' में नी यात्रा–वृत्त संगृहीत हैं। इसके प्रथम यात्रा–संस्मरण का शीर्षक है 'परशुराम से तुरखम।' इसमें एक अर्थ में अज्ञेय ने भारत की आसेतु हिमालयपरक ख्याति को प्रत्यक्ष रूप से देखने की स्मृतियों को बहुत भावुकता और गहरे चिन्तन के साथ अंकित किया है। इसलिए इस यात्रा–स्मृति में अन्वित शब्द 'परशुराम और तुरख।म' हिन्दुस्तान की सुदूर पूर्वी सीमा से लेकर पश्चिमोत्तर के सीमान्त तक की यात्राओं को व्यंजित करनेवाले स्थान नाम हैं। ज्ञातव्य है कि अज्ञेय ने अपनी जिन्दगी की कुछ अवधि को एक सैनिक रूप में व्यतीत किया है। दरअसल उक्त यात्रा–वृत्तान्त सैनिकों के रक्षावल के एक सदस्य रूप में जिये हुए लम्हों की जीवन्त–कथा है। इस यात्रा–वृत्तान्त का प्रारम्भ भारत की जातीय–स्मृति में निहित जीवन–दर्शन के एक प्रसंग से शुरू होना है। चूँकि अज्ञेय ने अपनी यात्रा सैनिक वाहन से तय की है, इसलिए पहिये को केन्द्र में रखकर भारतीय जीवन की गति सम्बन्धी दार्शनिक मान्यता के सन्दर्भ और भारत की सुदूर यात्रा के दो छोरों के बीच की दूरियों के बीच उपजी हुई देश–काल सम्बन्धी अपने सोच का उन्होंने उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध में उनके उपर्युक्त जीवन–दर्शन के ये अंश उदाहरणीय हैं, यया, ''कहते हैं कि सृष्टि की सर्वोत्तम आकृति चक्र है...। संस्कृति और सभ्यता के विकास में अग्नि के अवतरण के बाद जो दूसरी पीढ़ी मानव प्राणी चढ़ा, वह में हूँ, या यों कह लीजिये कि देवताओं के समुद्र–मन्थन से जैसे सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि अग्नि की हुई, उसी प्रकार मानव–मन–रूपी महासागर के मन्यन से जो श्रेष्ठ नवनीत प्राप्त हुआ, वह है चक्राकार की उद्भावना।''[8]
उपर्युक्त यात्रा–स्मृति के गन्तव्य और प्रस्थान के अन्तर्गत इस प्राचीन देश के दो सीमान्तों के रूप में 'परशुराम और तूरखम' का सन्दर्भ, भारत के प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक की संस्कृति, इतिहास और भूगोल को उद्भासित करता है। 'परशुराम' वस्तुतः भारत की पूर्वी सीमा स्थित त्रेताकालीन भगवान् परशुराम की जीवन–लीला सम्बन्धी ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे स्थित कुण्ड का द्योतक है। इसी प्रकार भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर बसे तुरखम का भी वह परिचायक है। अपने इस यात्रा–संस्मरण के प्रारम्भ में अन्य पुरुष के सम्बोधन द्वारा अज्ञेय ने अपने को 'यायावर' सम्बोधित करते हुए क्षितिज और पृथ्वी के बीच रचे–बसे देश और उसमें निहित भारतीय चिन्ता–धारा के अनेक मिथकों और प्रसंगों को याद किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि अज्ञेय ने उपर्युक्त अन्य पुरुष के प्रयोग द्वारा यायावरों की समग्र अन्तर्दृष्टि की ओर संकेत किया है। अज्ञेय ने अपनी इस यात्री–भंगिमा को वह बंजारा माना है, जो भूगोल, इतिहास, साहित्य और दर्शन में वर्णित जीवन की व्याख्या को सार्थक करते हुए यात्रा–पथ पर निस्पृह होकर आरूढ़ रहता है। इस सम्बन्ध में अपने भीतर के यायावर की मानसिकता और भावुकता को व्यक्त करने के क्रम में अज्ञेय ने इन दो उक्तियों को उद्धृत किया है–

चल–चल देता है लाद लाद कर वार–बार बनजाराय;
सय ठाठ धरा रह जाता, धन वस दूर क्षितिज का तारा!

''मैं क्यों चाहूँ कि मेरी अस्थियाँ भी मेरे पुरखों की अस्थियों के साथ एक सुरक्षित समाधि स्तूप में दबी रहें? जहाँ भी कोई चला जाये, वहीं कोई हरी–भरी पहाड़ी मिल जायेगी।''[9]
इस यात्रा–स्मृति की शुरुआत असम में बीते हुए दिवसों से हुई है। यह गुवाहाटी से आगे की ओर बढ़ती हुई यात्रा की राहों पर के दृश्यों और स्थलों की स्मृति से शुरू होती है। अज्ञेय अपने भीतर के यायावर को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि, ''...कव उसे उत्तर–पूर्व का सीमान्त फिर छूना मिलेगा, कव फिर ब्रह्मपुत्र की समतल यात्रा का आरम्भ विन्दु, परशुराम का तपोवन और कुण्ड, कुण्डिकरपुर के उन महलों के अवशेष जहाँ बैठकर रुक्मिणी ने कृष्ण की प्रतीक्षा की होगीय गैण्डे, हाथी और मिठून (अरना भैंसा) द्वारा सेवित कदली–वन, आवोर और मिश्मी और खामटी वन्य जातियों के आश्रयदाता सदिया सीमा प्रदेश के दुर्भेद्य जंगल देखने को मिलेंगे...।''[10]
अज्ञेय ने यात्रा की शुरुआत के दौर में भारत के पूर्ववर्ती सीमा प्रदेश में स्थित सदिया का उल्लेख किया है और सीमा पर स्थित इस स्थान को भारतीय आस्था के अनुसार तीर्थ की तरह पुण्य भूमि माना है। इसी प्रकार परशुराम कुण्ड की ओर जानेवाले मार्ग में प्रवहमान् लौहित्य नाम से विख्यात ब्रह्मपुत्र के तटवर्ती क्षेत्रों के सघन जंगलों और उनके आस–पास स्थित प्राचीन भारत के स्थलों में से एक 'कुण्डिनपुर' की प्रसिद्धि पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने लिखा है कि, ''...इसी नदी के किनारे कुण्डिनपुर की राजधानी थी, और यहीं रुक्मिणी को लेने कृष्ण आये थे। पुरानी रिपोटों से पता चलता है कि इस शताब्दी के आरम्भ में भी यहाँ 'अति प्राचीन' परकोटे आदि के खंडहर थे, किन्तु जहाँ इनके पाये जाने का वर्णन था, वहाँ पर नयी सर्वे के नक्शों में लिखा है 'इम्पेनेट ट्रेबल फरिस्ट' – अभेद्य जंगल! और यह अभेद्यता काव्योचित अतिरंजना नहीं, यह यायावर ने स्वयं परख कर देख लिया।''[11] ज्ञातव्य है कि पौराणिक कथा अनुसार परशुराम मातृवध के पाप से मुक्त होने के लिए इस कुण्ड में स्नान करने आये थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रसंग का निहितार्थ उस भारतीय मान्यता में प्रकट होता है जहाँ व्यक्ति तपोवनों के बीच अपनी साधना के द्वारा शुचिता प्राप्त करता है।

सदिया के सीमा प्रदेश से होते हुए यायावर वहाँ के कदली वन में पहुँचता है। संस्कृत साहित्य में के कदली वन का बार–बार उल्लेख हुआ है। अज्ञेय ने इस वन में विचरण करने वाले हाथियों और अरना भैंसा के लिए प्रयुक्त 'मिथून' नामक जानवर का विशेष रूप से उल्लेख किया है। यहाँ के कदली–वन से होते हुए यायावर ने लौहित्य नदी के किनारे पहुँचकर उक्त नदी की प्रवहमान् धारा का आनन्द लेते हुए लिखा है, ''नदी यहाँ वेगवती थी, निर्मल जल में नीचे पत्थर दीख पड़ते थे, पर यहाँ भी उसका रूप वैसा था जैसा पहाड़ छोड़ने पर नदी का होता है–लगभग जैसा ऋषिकेश में गंगा का है– यद्यपि यहाँ के जंगल की तुलना नहीं है।''[12]

निष्कर्ष

अन्त में निष्कर्ष रूप से कह सकते है कि सैलानी ने इस नदी को पारकर जंगल के बीच स्थित वन–पर्वत की शोभा को अपनी चित्रात्मक भाषा से अभिषिक्त किया है, जैसे, ''जंगल के बीच–वीच में खुला घास–भरा प्रदेश आ जाता, जिसमें महाकाय सेमल के धवल–गात पेड़ मानो आगमिष्यत् रक्त–प्रसूनों की सुलगती हुई पूर्वानुभूति से कण्टकित हो रहे थेय और कहीं–कहीं किंशुकों के झुरमुट। कुछ ही दिन में इनमें आग खिल जायेगी, पहाड़ियों के पार्श्व को चिपटती हुई, लपलपाती एक के बाद एक रुख को लीलती हुई ऊपर तक फैल जायेगी, और बालुका के पीठे उत्तरीय में लिपटा हुआ ब्रह्मपुत्र का नील गात, मानो वसन्त श्री के लाल चुम्बनों से मुद्राकित हो उठेगा। दरअसल ऊपर वर्णित मनोरम वन के बीच में ही एक खुली जगह अन्तर्गत परशुराम का कुण्ड यहाँ पार्श्व में बहते हुए ब्रह्मपुत्र की धारा के बार–चार दिशा बदलने के लिए विवश करता है। यायावर ने गंगा और ब्रह्मपुत्र के संग तपस्वी शिव के अभिन्न सम्बन्ध पर बहुत गहराई से विचार किया है।

सन्दर्भ

1. हिन्दी–साहित्य का दूसरा इतिहास, बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करणः 1996, उत्तर–स्वच्छन्दतावाद–युग (138–अद्यतन), पृ. 425.
2. सर्जना और सन्दर्भ, अज्ञेय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, संक्रान्ति–काल की कुछ साहित्यिक समस्याएँ, पृ. 49.
3. नहीं, सागर, नहीं, मैं आऊँगा तुम्हारे पास, फिर आऊँगा फिर–फिर आऊँगा...।'' 22. भवन्ती, पृ. 109–111.
4. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, भूमिका पूर्व का काव्यांश।
5. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, भूमिका, पाँचवें संस्करण की भूमिका। (अपप)
6. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, भूमिका, दूसरे संस्करण की भूमिका। (अपपप)
7. भारत और यूरोपः प्रतिश्रुति के क्षेत्र, निर्मल वर्मा, पृ. 108. 7.
8. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, परशुराम से तूरखम, पृ. 01.
9. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, परशुराम से तूरखम, पृ. 02.
10. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, परशुराम से तूरखम, पृ. 03.
11. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, परशुराम से तूरखम, पृ. 06.
12. अरे यायावर रहेगा याद?, अज्ञेय, परशुराम से तूरख, पृ. 06.